Postal Regn. - RTK/010/2023-25
RNI - HRHIN/2003/10425

ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का पाक्षिक मुखपत्र

मार्च 2024 (द्वितीय)

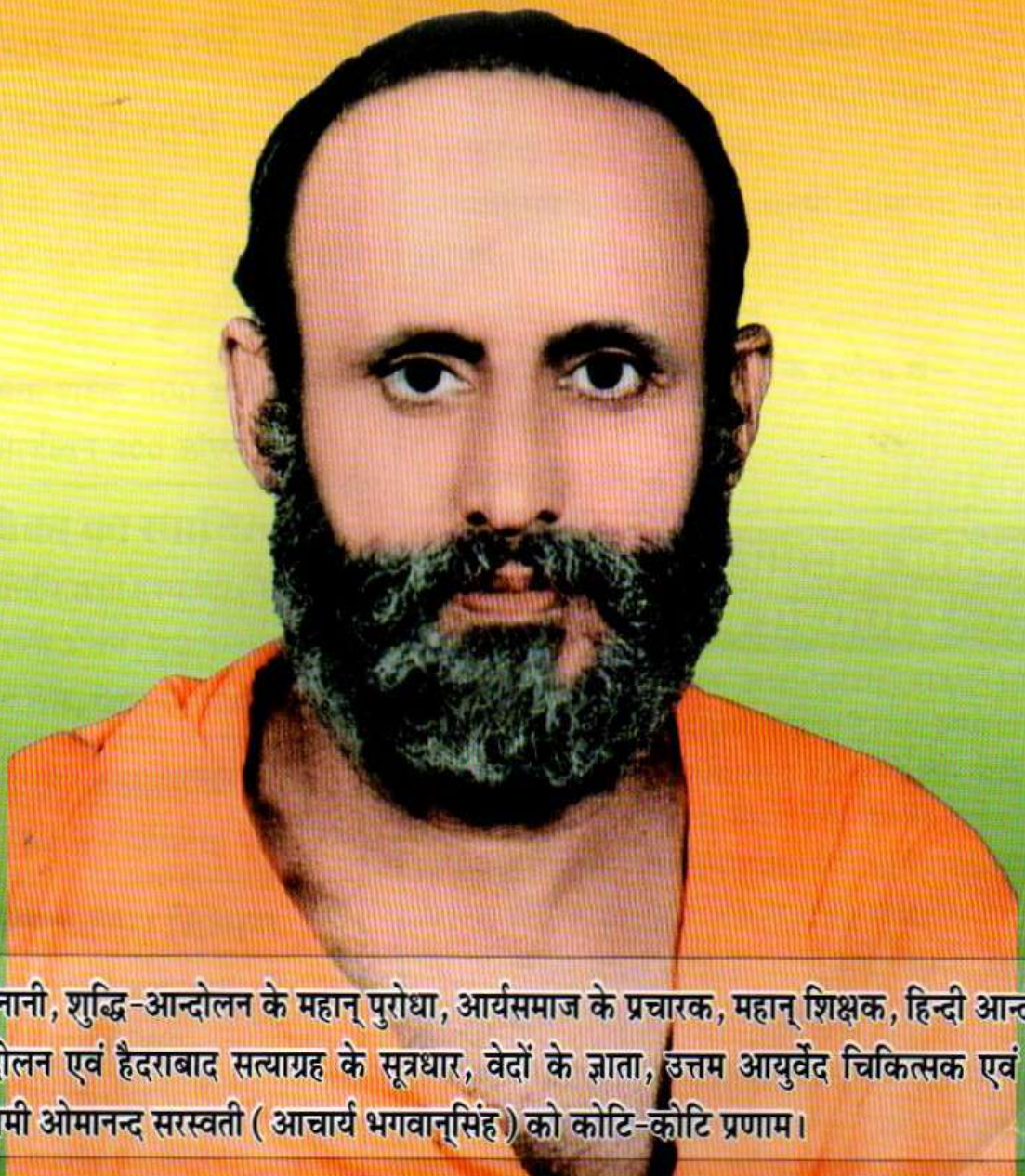

स्वतन्त्रता-सेनानी, शुद्धि-आन्दोलन के महान् पुरोधा, आर्यसमाज के प्रचारक, महान् शिक्षक, हिन्दी आन्दोलन, गोरक्षा आन्दोलन एवं हैदराबाद सत्याग्रह के सूत्रधार, वेदों के ज्ञाता, उत्तम आयुर्वेद चिकित्सक एवं महान् ब्रह्मचारी स्वामी ओमानन्द सरस्वती (आचार्य भगवान्सिंह) को कोटि-कोटि प्रणाम।

Email : aryapsharyana@yahoo.in

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

Visit us : www.apsharyana.org

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,124
विक्रम संवत् 2080
दयानन्दाब्द 200

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
की
मुख-पत्रिका

वर्ष 20 अंक 4

सम्पादक :
उमेद सिंह शर्मा

पत्रिका-शुल्क
देश में
वार्षिक-200 रुपये आजीवन-2000 रुपये
विदेश में
वार्षिक शुल्क 100 डॉलर
आजीवन 400 डॉलर

पत्रिका का स्वामित्व
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि०)
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ,
गोहाना रोड, रोहतक-124001

सह-सम्पादक
आचार्य सोमदेव

सम्पादकीय विभाग
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक
सम्पर्क सूत्र-
चलभाष :-
मो० 89013 87993

॥ ओ३म् ॥

आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय चिन्तन एवं वैदिक जीवन मूल्यों की पाक्षिक पत्रिका

आर्य प्रतिनिधि

मार्च, 2024 (द्वितीय)
16 से 30 मार्च, 2024 तक

इस अंक में....

1. सम्पादकीय–वेद-प्रवचन 2
2. विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी 4
3. स्वास्थ्य चर्चा–लहसुन के अनेक लाभ 5
4. महर्षि दयानन्द की मुक्ति का उपाय विद्या 6
5. शहीदी दिवस पर विशेष– आर्यसमाज के वटवृक्ष–स्वामी ओमानन्द सरस्वती 8
6. मूर्ति क्यों तोड़ दी? 11
7. सामयिक ज्वलन्त समस्या 13
8. 19वीं सदी में नवजागरण के प्रणेता थे– महर्षि दयानन्द 15
9. ओम् और वैदिक ज्ञान 16

आर्य प्रतिनिधि पाक्षिक पत्रिका के प्रसार में सहयोग दें

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक उलट-पलटकर रख देने लायक नहीं, बल्कि गंभीरतापूर्वक पढ़ने योग्य पत्रिका है। यदि आप इसके पाठक बनेंगे तो हमें विश्वास है कि पसन्द भी करेंगे और चाहेंगे कि इसे अन्य लोग भी पढ़ें। कृपया अपने जैसे गम्भीर पाठकों से 'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक पत्रिका की चर्चा करें, उन्हें इसका ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करके ऋषि ऋण से अनृण होवें।

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक का वार्षिक शुल्क 200/- रुपये एवं आजीवन शुल्क 2000/- रुपये है।

आप उपरोक्त राशि 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' दयानन्दमठ रोहतक के नाम से बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा भिजवाकर सदस्य बन सकते हैं।

–सम्पादक

सम्पादकीय...

वेद-प्रवचन

❑ संकलन–उमेद शर्मा, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्दमठ, रोहतक

गतांक से आगे....

'माँ' का दूध हम साल दो साल ही पीते हैं, परन्तु गाय का दूध तो बुढापे तक हमारा पालन करता है। जब शरीर जर्जरित हो जाता है और कोई भी अन्न नहीं पच सकता तब गाय का दूध ही हमारे जीवन का सहारा होता है, अंत: वेदमन्त्र में जो गोमहिमा वर्णन की गई है वह उचित ही है।

हे गायो या गोवर्ग के समस्त अन्य पशुओ! आप दुबले को मोटा बना देती हो। माँ के दूध में बच्चे की पुष्टि के सभी पदार्थ होते हैं। बच्चा न रोटी खाता है न पानी पीता है। माँ का दूध खाद्य भी है और पेय भी। इसी प्रकार पशुवर्ग अर्थात् गाय, भैंस, बकरी आदि के दूध में मनुष्य की पुष्टि के सभी साधन हैं। यह पशु अपने बच्चों की पुष्टि के लिए तो बच्चों की आयु की नियत अवधि तक के लिए ही पर्याप्त होते हैं परन्तु मनुष्य तो सभी अवस्थाओं में इनके दूध से पुष्टि के साधन ग्रहण करता रहता है। बड़ा बैल, बड़ा भैंसा, बड़ा ऊँट, बड़ा बकरा अपनी माता के दूध की अपेक्षा नहीं रखता। बड़ा मनुष्य भी अपनी माता के दूध की आवश्यकता नहीं समझता परन्तु मनुष्य बड़ा होकर भी गाय, भैंस, बकरी के दूध की अपेक्षा रखता है। किसी देश के मनुष्य ऐसे नहीं मिलेंगे जिनके दूध के पशु न हों। कहीं भैंसों का दूध बहुत होता है जैसे दक्षिण भारत, नेपाल आदि में कहीं बकरियों का दूध पिया जाता है। जैसे पश्चिमी एशिया में और भारतवर्ष में भी और अरब के लोग ऊँटनियों का भी दूध पीते हैं। उनकी ऊँटनियाँ भी उनकी गायें ही हैं, यद्यपि अरब की गायें भी दूध देती हैं।

हे गायो! तुम शोभाहीन मनुष्य को शोभायुक्त कर देती हो। मनुष्य ने बड़ा सुन्दर शरीर पाया है परन्तु यदि खाने को न मिले तो रूपवान् मनुष्य भी कुरूप और श्रीरहित हो जाता है। सौन्दर्य शरीर के बाहर से नहीं यह शरीर के स्वास्थ्य के आश्रित है। यदि मनुष्य सुन्दर होना चाहता है तो वस्त्र या आभूषण उसे सुन्दर नहीं बना सकते। उसको अच्छा भोजन चाहिए। जो नर-नारी बहुत सुन्दर होना चाहते हैं, उनको जानना चाहिए कि वास्तविक सुन्दरता प्रदान करने वाली तो गायें हैं। दिल्ली और कलकत्ते की दुकानों पर जो सौन्दर्यप्रद वस्तुएँ बिकती हैं, वे कागज के फूलों के समान गन्धशून्य और लावण्यशून्य हैं। जिन जातियों में गायों का पालन होता है उनके नर-नारी श्रीहत नहीं होते।

मन्त्र में प्रार्थना की गई है कि हे गायो! तुम हमारे घरों में भद्र अर्थात् कल्याणकारी बनाओ। जिन घरों में गोपालन होता है वहाँ गायों की आवाज प्यारी लगती है। वहाँ सभाओं में गाय की प्रशंसा की जाती है, क्योंकि जब तक समग्र मानव समाज गाय की महिमा को नहीं समझता तब तक व्यक्तिगत घरों में भी गोपालन नहीं हो सकता।

गाय को वेद में 'अघ्न्या' कहा है अर्थात् गाय मारना बहुत बड़ा पाप है। 'गोघ्न' का अर्थ गाय मारने वाला। यह 'गोघ्न'[1] शब्द ऋग्वेद में केवल एक ही स्थान पर आया है।

---

1. **आरे ते गोघ्नमुत पूरुषघ्नं क्षयद्वीर सुम्नमस्मे ते अस्तु। मृळा च नो अधि च ब्रूहि देवाधा च नः शर्म यच्छ द्विबर्हाः॥** ऋ० 1.114.10

हे (क्षयद्वीर) शत्रुओं के नाश करने वाले! (गोघ्नम्) गोहत्या करने वाले और (पूरुषघ्नम्) नरहत्या करने वाले दुष्ट को (आरे) हमसे दूर रख (अस्मे) हमारे लिए (ते सुम्नम्) तेरा कल्याणप्रद व्यवहार (अस्तु) प्राप्त हो। हे देव! (मृळा च नः) हमारे ऊपर कृपा कर (अधि च ब्रूहि) और उपदेश दीजिए। (द्विबर्हाः) हे लोक और परलोक दोनों को बढ़ाने वाले स्वामिन्! (नः शर्म यच्छ) हमारे लिए कल्याण दो।

जैसे इस मन्त्र में 'गोघ्न' और 'पूरुषघ्न' दुष्ट पुरुष का बोधक है इसी प्रकार ऋग्वेद 6.22.4 और 7.13.1 में 'असुरघ्न' असुरों का नाश करने वाले के अर्थ में आया है।

'गोघ्न' शब्द वेद में कहीं अतिथि के अर्थ में नहीं आया। पाणिनि मुनि ने अष्टाध्यायी के **'दाशगोघ्नौ सम्प्रदाने'** सूत्र में (देखो अष्टाध्यायी 3.4.73) 'गोघ्न' शब्द को अतिथि के अर्थ में लिया है। 'गां हन्ति अस्मै गोघ्नोऽतिथिः' (सिद्धान्त कौमुदी) (जिसके सत्कार के लिए गाय को मारता है वह अतिथि)। काशिका ने इस पर लिखा है-

'गोघ्न' के साथ 'पुरुषघ्न' अर्थात् मनुष्य का घातक भी है। दोनों पापी हैं और सामान्य रूप से दण्डनीय हैं अर्थात् जैसे मनुष्य का मारना हत्या (Murder) है वैसे ही गाय का मारना भी। इससे सिद्ध होता है कि गोघ्न शब्द वैदिक काल में केवल गो-घातक (Cow Killer) के लिए आया था। 'गोघ्न' शब्द के दूसरे अर्थ अर्थात् अतिथि आदि उस समय पड़े जब यज्ञों में गाय के मारने की प्रथा चल पड़ी और गोमांस मधुपर्क में दिया जाने लगा। वस्तुत: मधुपर्क का सम्बन्ध गोमांस से नहीं है। मधुपर्क तो मधु का ही होना चाहिए।

यज्ञों में गोमांस की प्रथा भी तब से चली जब से लोग उस शिक्षा को भूल गये जो इस मन्त्र में दी गई है। यहाँ तो गाय से प्रार्थना की गई है कि वह हमारे घरों को कल्याणप्रद बनाए-अपने दूध से, न कि अपने मांस से।

यज्ञों में गोमांस या किसी पशु के मांस की आहुति देने की प्रथा तो एक भ्रान्ति के कारण पड़ गई। संसार में जब एक भ्रान्ति फैल जाती है तो वह आगे चलकर बड़ी भयावह हो जाती है। इसका उदाहरण यज्ञों में मांस डालने की प्रथा है। ऋग्वेद के नवें मण्डल में सोम का उल्लेख है। सोम में दूध मिलाने का विधान है। 'दूध' के लिए वहाँ 'गो' शब्द आया है, जैसे-

क्रमश: अगले अंक में....

सकृत्संज्ञकत्वात् कर्त्तरि प्राप्त: सम्प्रदाने **निपात्यते**। आगताय तस्मै दातुं गां घ्नन्तीति गोघ्नोऽतिथि:।

अर्थात् कृत्संज्ञक होने से यद्यपि सूत्र में 'कर्त्ता' के अर्थ की प्राप्ति थी परन्तु निपातन से सम्प्रदान का अर्थ ले लिया गया' अर्थात् **निपातनसामर्थ्यादेव गोघ्न ऋत्विगादिरुच्यते, न तु चण्डालादि:**। असत्यपि च गोहनने तस्य योग्यतया गोघ्न इत्यभिधीयते।

काशिका के इस वचन से इतनी बातें स्पष्ट हो जाती हैं। 'गोघ्न' शब्द वस्तुत: तो 'कर्तृ' वाचक था, जैसा वेद में दिया है, परन्तु पीछे से यह अतिथि या ऋत्विज के अर्थ आया, क्योंकि अतिथि के लिए मधुपर्क या अतिथि सत्कार के रूप में गाय मारने लगे। जब गाय न भी मारी गई तब भी अतिथि का नाम तो 'गोघ्न' हो ही गया, क्योंकि गोघ्न रूढ़ि हो गया। गाय भले ही मारी न गई हो परन्तु **योग्यता** थी अर्थात् मारी जा सकती थी। हमारा कहना यह है कि यहां 'गो' और 'हन्' का खींचा-तानी करके दूसरा अर्थ लेना ठीक नहीं है। जब वैदिक प्रथा दूषित हुई तो 'गोघ्न' शब्द भी विकृत हो गया।

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक के पाठकों से निवेदन

1. **'आर्य प्रतिनिधि'** पाक्षिक पत्रिका का वार्षिक शुल्क 200/- रुपये है तथा आजीवन सदस्यता शुल्क 2,000/- रुपये है। आजीवन सदस्यता शुल्क की अवधि (समय) 15 वर्ष है।
2. **'आर्य प्रतिनिधि'** प्रत्येक मास की 15 व 30 तारीख में डाक द्वारा प्रेषित की जाती है। प्रकाशन तिथि से 10 दिन तक पत्रिका नहीं पहुँचती है तो आप आर्य प्रतिनिधि के नाम से पत्र डालें। पत्र मिलते ही **'आर्य प्रतिनिधि'** पुन: भेज दिया जाएगा।
3. वार्षिक शुल्क तथा आजीवन शुल्क मनीआर्डर/बैंक ड्राफ्ट/चैक **'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा'** के नाम से भेजें।
4. लेख सम्पादक **'आर्य प्रतिनिधि'** के नाम भेजें। लेख छोटे, सरल, संक्षिप्त, सारगर्भित तथा मौलिक होने चाहिएं तथा स्पष्ट, शुद्ध एवं सुन्दर लेख में कागज के एक ओर लिखे जाने चाहिएं तथा कम्प्यूटर से टाइप करवाकर टैस्ट मैटर अथवा पीडीएफ भेजें। आप अपने लेख आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा की Email-aryapsharyana@yahoo.in पर भी भेज सकते हैं। लेखों को प्रकाशित करना न करना तथा उसमें संशोधन सम्पादक के अधीन होगा।
5. **'आर्य प्रतिनिधि'** में विज्ञापन भी दिए जाते हैं, परन्तु विज्ञापन शुद्ध एवं वास्तविक वस्तु का ही दिया जाएगा।
6. यह **'आर्य प्रतिनिधि'** पाक्षिक पत्रिका समाज-सुधार की दृष्टि एवं आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार के लिए निकाला जाता है। इसमें आपको वैदिक धर्म, यज्ञ-कर्म, समाज-सुधार, देश व समाज की स्थिति आदि विषयों पर लेख पढ़ने को मिलेंगे।
7. **'आर्य प्रतिनिधि'** पाक्षिक पत्रिका का वार्षिक शुल्क 200/- रुपये भेजकर स्वयं ग्राहक बनें और दूसरे साथियों को भी ग्राहक बनाकर सहयोग दें।

-सत्यवान आर्य, कार्यालयाधीक्षक, आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्दमठ, रोहतक। मोबा० 8901387993, 7206865945

विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी

❑ संकलन–कन्हैयालाल आर्य, संरक्षक–आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, रोहतक

गतांक से आगे....

प्रत्येक वर्ण अपने-अपने कर्म को न्याय=धर्म के अनुसार समान रूप से स्वर्ग का अधिकारी माना गया है। इससे स्पष्ट है कि वैदिक मर्यादा के अनुसार न कोई कर्म छोटा बड़ा है और न कोई वर्ण।

वैदिक मर्यादा के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय और शूद्र तीन वर्णों के लिए धन-संग्रह का निषेध है। केवल वैश्य वर्ण को ही धन संचय का अधिकार है। वैश्य भी किए गए धन संचय को समय पर राष्ट्र के लिए अर्पण कर दे, यह स्पष्ट विधान है। यहां भी वैश्य के द्वारा ब्राह्मण, क्षत्रिय और शूद्र के भरण-पोषण के लिए धन देने का विधान किया गया है। राजा के पास जो धन संगृहीत होता था वह राष्ट्र के निमित्त ही होता था, स्वयं अकेले राजा को उसके उपभोग करने का निषेध था।

इस प्रकार वैदिक मर्यादा में पूर्ण एवं स्वाभाविक साम्यवाद का दर्शन किया जा सकता है। यदि कोई धनी धन के मद से कुपथगामी हो जाये तो राजा का कर्त्तव्य था कि वह उसका सर्वस्व हरण करके उसे निर्धनों में बांट दे। इस व्यवस्था के अनुसार राष्ट्रीयकरण की कहीं आवश्यकता नहीं रहती।

वैदिक मर्यादा में सामाजीकरण इष्ट है, जिससे धनिक वर्ग स्वयं समाज के सेवक बनें, उसके रक्षक बनें। किसी भी वस्तु के राष्ट्रीयकरण से विभिन्न नई-नई कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं। भ्रष्टाचार एवं उत्तरदायित्व के अभाव की भावना को बढ़ावा मिलता है। इसलिए वैकिद साम्यवाद में मानव भावना को पवित्र, स्वार्थ-रहित, परहित चिन्तक बनाना विहित है। इस प्रकार उपदेश देते हुए महात्मा विदुर जी धृतराष्ट्र को अन्त में एक अति उत्तम सुझाव देते हैं-

हे राजन्! मैंने चारों वर्णों का धर्म आपको बताया। इन चारों वर्णों के धर्म बताने का कारण मुझसे सुनिये।

हे राजन्! पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर तुम्हारे कारण से क्षात्रधर्म से हीन हो रहा है अर्थात् राज्य का अधिकारी होकर भी राज्य से वंचित हो रहा है। तुम इसे क्षात्रधर्म=प्रजापालन में नियुक्त करो अर्थात् इनका परम्परा-प्राप्त राज्य इन्हें वापिस लौटा दो।

धृतराष्ट्र बोले-हे सौम्य विदुर! जैसा तुम मुझे नित्य कहते हो मेरा विचार भी वैसा ही बनता है। अर्थात् मैं भी चाहता हूँ कि पाण्डवों का राज्य उन्हें लौटा दूँ। पर मैं क्या करूँ? परन्तु दुर्योधन से मिलने के बाद मेरी बुद्धि बदल जाती है। जो भाग्य में लिखा है उसका उल्लंघन करने की शक्ति किसी प्राणी में नहीं, इस कारण मैं भाग्य अथवा प्रारब्ध को नित्य और अचल मानता हूँ, पुरुषार्थ तो अनावश्यक और व्यर्थ है।

यहाँ अन्त में मुझे लगता है कि धृतराष्ट्र अपने लोभ के कारण और वास्तव में वह पाण्डवों को राज्य लौटाना नहीं चाहता, इसलिए वह भाग्य का सहारा ले रहा है। भाग्य को पुरुषार्थ से अधिक महत्त्व दे रहा है। यह उसकी घटिया सोच एवं मानसिकता का परिचायक है। भाग्य को वही बलवान् मानता है जो मनुष्य निर्बलचित्त और मूढात्मा होता है, आत्मज्ञानी पुरुषार्थी कभी भी भाग्य के अधीन नहीं रहता। वह पुरुषार्थ से भाग्य को बदलने में पूर्ण समर्थ होता है।

पांडवों ने भी भाग्य के विपर्यय से बुद्धिभ्रान्ति को प्राप्त होकर राज्य नाश, वनवास, अज्ञातवास आदि विविध कष्टों को प्राप्त किया, परन्तु पुन: अपने ही पुरुषार्थ से उन्होंने भी अपनी सात अक्षौहिणी अल्प सेना की सहायता से ग्यारह अक्षौहिणी सेना के अधिपति कौरवों को युद्ध में परास्त करके पृथ्वी का निष्कंटक राज्य प्राप्त किया है-

किसी कवि ने सत्य ही कहा है-

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी: दैवं हि दैवमिति का पुरुषा वदन्ति।

दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोष:॥

शेष पृष्ठ 7 पर....

स्वास्थ्य-चर्चा

लहसुन के अनेक लाभ

गतांक से आगे....

इसके पश्चात् इन कलियों को एक रात्रि मट्ठे में अथवा पतले दही में भिगोकर रखें और दूसरे दिन प्रात:काल स्वच्छ जल से भली प्रकार धोवें। इस प्रकार शोधन क्रिया के पश्चात् ही प्रयोग में लावें तो इसका शीघ्र ही प्रभाव देखा जा सकता है। परन्तु तेल निकालने के उद्देश्य से लहसुन का उक्त प्रकार से शोधन उचित नहीं। उसके लिए इतना ही पर्याप्त है कि कन्दों को धो लिया जाये, जिससे कि उस पर धूल-मिट्टी न लगी रह जाये।

एक युग था, जब हमारा देश सभी प्रकार के अन्वेषणों में आगे था हमारे प्राचीन आचार्य प्रत्येक वस्तु का अपनी खोज और अनुभव के आधार पर अन्वेषण किया करते थे। वर्तमान समाज का चाहे विद्वान् हो या सामान्य मनुष्य-अपने देश की वस्तुओं औषधियों, जड़ी-बूटियों, रस-रसायनों आदि से विश्वास ही उठ गया है, जबकि इसके विपरीत, पाश्चात्य विद्वान् हमारे कथनों की सत्यता जानने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। यही कारण है कि उनके द्वारा आये दिन नये-नये आविष्कार होकर सामने आते रहते हैं।

अर्वाचीन विद्वानों द्वारा अन्वेषण-लहसुन पर खोज करके उसके गुणों पर प्रकाश डालने वालों में एक पाश्चात्य विद्वान् डॉ० डब्ल्यू० सी० मिनचिन० एस० डी० भी थे, जिन्होंने अपने एक लेख में लहसुन के तेल को अद्वितीय औषधि स्वीकार किया था। उनका मत था कि उससे बढ़कर गुणवान् या उसके समक्ष भी अन्य कोई औषधि नहीं।

डॉ० मिनचिन ने एक लेख में एक दस वर्ष की आयु के बालक का उदाहरण देते हुए कहा था कि उस बालक को अस्थियों का क्षय रोग हो गया था और उसकी अंगुली काट दी जाने पर भी उसका रोग बढ़ता ही गया था और उसके तीन गहरे नासूरों से पीव निकलता रहता था। जब उसे किसी भी उपचार सें लाभ होता दिखाई न दिया तो लहसुन से उसकी चिकित्सा आरम्भ हो गई। लहसुन की महीन पिसी हुई चटनी उसके घावों पर लगाई जाती औरं पट्टी बांध दी जाती थी। प्रत्येक चौबीस घण्टों के अन्तर पर पट्टी खोली जाती और नया लेप किया जाता था। शीघ्र ही लाभ दिखने लगा और धीरे-धीरे उसके सभी घाव ठीक हो गये परन्तु लहसुन की चटनी के प्रयोग में वसा या वैसलीन लगाई जाती थी जिससे कि लहसुन की तीक्ष्णता कम हो जाये और जलन की प्रतीति न हो अथवा बहुत कम हो।

रोगनाशक शक्ति-इससे स्पष्ट है लहसुन में रोगनाशक शक्ति विद्यमान हैं। उसके द्वारा विषाणुओं या हानिकारक जीवाणुओं का शीघ्र ही निवारण सम्भव होता है। यदि इसका धैर्यपूर्वक उपयोग किया जाये तो कोई कारण नहीं कि अपना प्रभाव न दिखा सके।

विटामिन्स और खनिज तत्त्व-लहसुन में विविध विटामिन्स और खनिज तत्त्व भी पाये जाते हैं, जिससे स्पष्ट है कि यह स्वास्थ्य की रक्षा और वृद्धि करने में भी अत्यन्त कारगर है। इसमें उपलब्ध तत्त्वों में विटामिन 'ए', 'बी' एवं 'सी' प्रोटीन्स, पोटेशियम, कैल्शियम और फासफोरस भी हैं। निम्न विश्लेषण इसके लिए उपयोगी रहेगा।

लहसुन का तत्त्व विश्लेषण-प्रोटीन्स साढ़े चार से साढ़े छह प्रतिशत तक, लौह एक डेढ़ प्रतिशत, खनिज लवण एक प्रतिशत, वसा, चूना, फारफोरस, विटामिन्स आदि आंशिक रूप में किन्तु कार्बोज की मात्रा अट्ठाईस से तीस प्रतिशत तक होती है। कुछ विशेषज्ञों के मत में इसमें विटामिन 'ई' भी विद्यमान हैं।

लहसुन में दुर्गन्ध-लहसुन में एक प्रकार की दुर्गन्ध होती है, जिसका कारण उसमें एलिल डाइसल्फेट नामक पदार्थ का होना है। इसकी मात्रा इसमें दो प्रतिशत के लगभग रहती है। वस्तुत: लहसुन में गुणों की विद्यमानता भी इसी पदार्थ के कारण ही है। जो लोग इसके सेवन के अभ्यासी हैं, उन्हें तो इसका अनुभव नहीं होता, किन्तु जो लोग इसके सेवन का अभ्यास करते हैं, उनके लिए पहले कुछ असुविधा रहती है।

लहसुन में दुर्गन्ध उक्त एलिल डाइसल्फेट नामक तत्त्व के कारण वरदान रूप में प्राप्त हुई है। इसलिए प्रकृति प्रदत्त इस महौषधि से वंचित नहीं रहना चाहिए। गुलाब का पुष्प कांटेदार टहनी पर ही खिलता है और तोड़ने वाले के हाथ में कभी-कभी उसका कांटा भी लग जाता है, उसी प्रकार लहसुन में भी दुर्गन्ध से बचने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। यदि वह दुर्गन्ध किसी रासायनिक क्रिया द्वारा उड़ा दी जाय तो उसमें अपेक्षित गुणों का भी अभाव हो सकता है।

क्रमश: अगले अंक में...

महर्षि दयानन्द की मुक्ति का उपाय विधा

❑ आचार्य सोमदेव आर्य, स्वामी आत्मानन्द वैदिक गुरुकुल, मलारना चौड़, सवाई माधोपुर (राज०)

प्रत्येक जीव की स्वाभाविक प्रवृत्ति देखने को मिलती है कि वह किसी प्रकार की बाधा नहीं चाहता, कष्ट नहीं चाहता, दु:ख नहीं चाहता। अन्य प्रकार से कहें तो प्रत्येक प्राणी सुख चाहता है। सुख भी ऐसा, जिसमें दु:ख लेशमात्र भी न हो। ऐसा जो सुख है वह इस संसार का तो कदापि नहीं हो सकता, क्योंकि ऋषियों ने, विवेकी लोगों ने इस संसार का अत्यन्त परीक्षण किया है और देखा है कि संसार के सुख में दु:ख अवश्य मिश्रित है। फिर ऐसा सुख कौन-सा है, कहां है, जिसमें दु:ख का लेश भी नहीं है? ऐसा सुख मोक्ष का सुख है जो केवल और केवल परमेश्वर के पास है, अविद्या रहित स्थिति में है।

यह मोक्ष सुख, मुक्ति का सुख मिलता कैसे है, इसकी चर्चा से पहले यह देख लें कि इसका स्वरूप क्या अर्थात् मुक्ति का स्वरूप क्या है?

यथार्थ में मुक्ति का स्वरूप एक ही है अलग-अलग नहीं है। यह बात हमने इसलिए कही, क्योंकि ईसाई, मुस्लिम, जैन, बौद्ध, पुराणों को मानने वाले ये सब अलग-अलग प्रकार की मुक्ति मानते हैं। इसके स्वरूप को हम बाद में लिखेंगे पहले वेदोक्त मुक्ति का स्वरूप लिखते हैं।

समस्त दु:खों से छूटकर सर्वत्र व्यापक परमेश्वर में परम आनन्द को प्राप्त करना मुक्ति है। सर्वत्र परिपूर्ण परमात्मा में जीव आनन्दपूर्वक अव्याहत (बिना किसी बाधा के) गति से अपनी इच्छानुसार विचरण करता है। मुक्ति में जीव की भौतिक शरीर से और इन्द्रियों से कोई सम्बन्ध नहीं रहता।

जीवात्मा अपनी स्वाभाविक शक्ति से परमात्मा के आनन्द को भोगता है और परान्तकाल के पश्चात् अर्थात् 31 नील 10 खरब 40 अरब मानुष वर्ष के पश्चात् पुन: संसार में जन्म लेता है। कोई कहे कि मुक्ति से लौटकर पुन: जन्म नहीं लेता तो इसका उत्तर ऋषि देते हैं कि सान्त कर्मों का फल अनन्त कभी नहीं हो सकता। मुण्डकोपनिषद् में लिखा है-'**ते ब्रह्मलोके परान्तकाले परामृतात् परिमुच्यन्ति सर्वे।**' अस्तु,

अब थोड़ा अन्य मतों की मुक्ति के विषय में जो विचार हैं, वह लिखते हैं -

1. ईसाइयों के अनुसार मुक्ति- ईसाई लोग चौथे आसमान पर मुक्ति मानते हैं। जो 750 कोस का है। जिसकी लम्बाई-चौड़ाई और ऊँचाई बराबर है, जिसकी दीवार की मोटाई 144 हाथ की है। पूरा नगर निर्मल स्वर्ण से बना हुआ है। उस नगर की नींव में बहुमूल्य पत्थर लगे हैं। 12 दरवाजे मोती से बने हैं। नगर के मार्ग शीशे के समान स्वच्छ हैं। स्वर्ग में ईसा का सिंहासन और ईश्वर का सिंहासन अलग-अलग हैं। वहां पर रात नहीं होती, वहां तो बिना दीपक के सूर्य जैसा प्रकाश होगा, आदि-आदि ईसाइयों की मुक्ति का स्वरूप है। इसमें विचार करें कि इस प्रकार के बंगले, नगर आदि तो यहीं पृथिवी पर ही हैं तो ईसाइयों की मुक्ति में क्या विशेषता रही?

2. इस्लाम वालों की मुक्ति का स्वरूप-कुरान में मुक्ति को जन्नत कहा है। यह जन्नत सातवें आसमान पर है। मुसलमान लोगों ने मुक्ति का एक ही स्थान माना है। इसकी मुक्ति संसार के उत्तम भोग्य पदार्थों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं।

3. बौद्ध और जैन मत में मुक्ति का स्वरूप-सकल वासनाओं की निवृत्ति से शून्य रूप निर्वाण को बौद्ध लोग मुक्ति मानते हैं। जैन लोग सिद्धशिला नामक स्थान को मुक्ति मानते हैं, जो कि ऊर्ध्वलोक में है। यह सिद्धशिला गोदुग्ध के समान उजली है। यह चौदहवें लोक के शिखर पर है। उस सिद्धशिला के ऊपर शिवपुर है। मुक्त पुरुष वहां जाकर चुपचाप बैठा रहता है। जैनियों का मुक्ति स्थान भी एक ही जगह है, सीमित है।

4. पुराणों के मतानुसार मुक्ति-वाममार्गी श्रीपुर में जाकर लक्ष्मी जैसी स्त्रियों का मिलना, मद्य-मांसादि खाना-पीना, रंग-राग, भोग करना मुक्ति मानते हैं। इसी प्रकार शैव लोग कैलाश पर्वत पर, वैष्णव वैकुण्ठ और गोकुलिये

गोसाईं गोलोकादि में जाकर उत्तम स्त्री, अन्नपान, वस्त्र-स्थान आदि प्राप्त करके आनन्द भोगना मुक्ति मानते हैं। इस मुक्ति में भी संसार के उत्तम पदार्थों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं।

वेद और वेदानुकूल शास्त्रों में जिस मुक्ति का वर्णन किया है, यथार्थ में मुक्ति का स्वरूप वही है। अन्य सब कल्पनामात्र है। जब जीवात्मा शुद्ध ज्ञान को प्राप्त हो संसार के सब विषय भोगों से निवृत्त हो, समस्त दु:खों से छूटकर नित्य परमात्मा के नित्य आनन्द को प्राप्त करके परमेश्वर में स्वेच्छापूर्वक विचरण करता है वह मुक्त पुरुष कहलाता है।

यह मुक्ति मिलती कैसे है, मुक्ति का साधन क्या है, अब इस पर विचार करते हैं-

ऋषियों ने मुक्ति का मुख्य कारण ज्ञान=विद्या=विवेक कहा है। यथार्थ ज्ञान को ही विद्या विवेक कहते हैं। योगदर्शन में महर्षि पतञ्जलि ने अविद्या का स्वरूप कहा है और अविद्या ही सब क्लेशों की जननी है।

अनित्याशुचिदु:खानात्मसु नित्यशुचिसुखात्म-ख्यातिरविद्या॥ (यो०द० 2.5)

महर्षि पतञ्जलि ने इस सूत्र में अविद्या के चार लक्षण कहे हैं। यदि इन्हीं लक्षणों को उलट दें तो विद्या के लक्षण बन जायेंगे। हम यहां विद्या-अविद्या दोनों के लक्षण साथ-साथ लिख रहे हैं-

1. **अविद्या**-जो-जो पदार्थ अनित्य हैं जैसे शरीर व अन्य स्थूल पदार्थ उनको नित्य मानना, कभी नष्ट न होने वाला मानना, सदा रहने वाला मानना अविद्या है।

विद्या-जो-जो पदार्थ अनित्य हैं, उनको अनित्य ही मानना और नित्य को नित्य मानना विद्या है। अर्थात् शरीरादि नष्ट होने वाले को नष्ट होने वाला मानना और नष्ट न होने वाले आत्मा को नष्ट न होने वाला मानना।

2. **अविद्या**-अशुद्ध को शुद्ध मानना अर्थात् मल-मूत्रादि के समुदाय दुर्गन्धरूप मल से परिपूर्ण शरीर में पवित्र बुद्धि रखना अविद्या है।

विद्या-अपवित्र को अपवित्र ही मानना और पवित्र को पवित्र स्वीकारना विद्या है।

3. **अविद्या**-दु:ख में सुख बुद्धि रखना अर्थात् विषयतृष्णा, काम, क्रोध, लोभ, मोह, शोक, ईर्ष्या, द्वेष आदि दु:खरूप व्यवहारों से सुख मिलने की आशा करना। जितेन्द्रियता, निष्काम, शम, सन्तोष, विवेक, प्रसन्नता, प्रेम, मित्रता आदि सुखरूप व्यवहारों में दु:ख बुद्धि करना अविद्या है।

विद्या-दु:ख में दु:ख और सुख में सुख मानना अर्थात् दु:ख देने वाले पदार्थों और व्यवहारों को दु:ख देने वाला मानना और सुख देने वाले पदार्थों और व्यवहारों को सुख देने वाला मानना विद्या है।

4. **अविद्या**-अनात्मा में आत्मबुद्धि अर्थात् जड़ पदार्थों को चेतन मानना अविद्या है।

विद्या-जड़ को जड़ और चेतन को चेतन समझना विद्या है।

बन्धन का कारण अविद्या है। जब तक अविद्या रहेगी तब तक बन्धन में जीवात्मा रहेगा और दु:ख भोगता रहेगा। विद्या ही मुक्ति का एक रास्ता है। जब यथार्थ ज्ञान योगाभ्यास करके प्राप्त होता है, जितना-जितना ज्ञान प्राप्त होता है उतना-उतना आत्मा बन्धनरहित होता जाता है। पूर्ण सत्य ज्ञान को प्राप्त कर लेता है तो सर्वथा दु:खरहित मोक्ष में चला जाता है। ज्ञानप्राप्ति के उपाय क्या हैं? फिर लिखेंगे, अभी इतना ही।

विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी.... पृष्ठ 4 का शेष....

उद्योगी, पुरुषार्थी पुरुष ही सदा लक्ष्मी=ऐश्वर्य को प्राप्त करता है। दैव दैव (भाग्य) की रट तो कायर, पुरुषार्थहीन व्यक्ति लगाते हैं। आत्मशक्ति से भाग्य से प्राप्त दोष को नष्ट करने के लिए पुरुषार्थ करना चाहिये। पुरुषार्थ करने से भी यदि सिद्धि प्राप्त नहीं होती, तो हतोत्साहित नहीं होना चाहिये। यहां विचार करना चाहिए कि हमारे पुरुषार्थ में कहां, क्या दोष रहा, जिससे इष्ट लाभ नहीं मिला। उस दोष को जानकर सिद्धि के लिए पुन: प्रयत्न करना चाहिये।

यही सम्पूर्ण विदुरनीति का सार है, इसी पर आचरण करने से व्यक्ति, जाति और समाज उन्नति कर सकता है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

इस प्रकार महाभारत के उद्योगपर्व के अन्तर्गत विदुरप्रजागर पर्व में चालीसवां अध्याय एवं विदुरनीति के रूप में आठवां अध्याय पूर्ण हुआ।

शहीदी दिवस पर विशेष—

आर्यसमाज के वटवृक्ष—स्वामी ओमानन्द सरस्वती

भारतभूमि ऋषि-मुनियों की तपस्थली एवं कर्मस्थली है। यहां पर महापुरुषों ने समय-समय पर जन्म लेकर जनसेवा का पुण्य कार्य करके अपने जीवन को सार्थक किया है। कुछ महापुरुष अपनी जीवन पद्धति के क्रियाकलापों से मानव जीवन के गौरव की वृद्धि करते हैं। ऐसे महापुरुष स्वामी ओमानन्द सरस्वती (भगवान्सिंह) हमारे चरित्र-नायक हैं।

उनका जन्म दिल्ली प्रदेश के नरेला गांव में 22 मार्च 1911 को चौधरी कनक सिंह नंबरदार एवं माता श्रीमती नान्हीदेवी के घर हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा मैट्रिक तक नरेला तथा उच्च शिक्षा सेंट स्टीफेंस कॉलेज दिल्ली में हुई। वहीं पर उनका परिचय भगतसिंह आदि क्रांतिकारियों के मित्र प्रोफेसर एनके निगम से हुआ। उनके राष्ट्रवादी विचारों से बहुत प्रभावित हुए। इसी दौरान 23 मार्च 1931 के दिन भगतसिंह एवं उनके साथियों को अंग्रेजों द्वारा फांसी देने की घटना से उनके मन में राष्ट्रवादी विचारों से उनके जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन आया और प्रतिज्ञा की कि "मैं अब कॉलेज की पढ़ाई छोड़कर देशसेवा का कार्य करूंगा।"

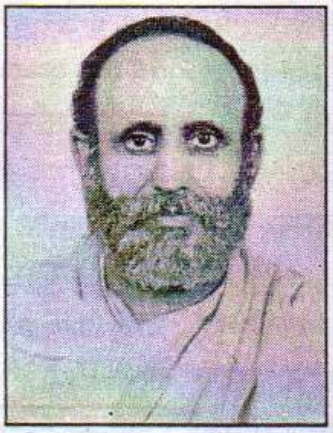

भगवान्सिंह ने अब गांव में ही आर्यसमाज और कांग्रेस का कार्य करना आरम्भ कर दिया। सन् 1931 में भारत अंग्रेजों की परतन्त्रता से मुक्त होने के लिए उठ खड़ा हुआ था। लगभग 2 वर्ष पूर्व श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल', रोशनसिंह, राजेंद्रनाथ लाहिड़ी, अशफाक उल्ला आदि क्रांतिकारी भारतमाता की सेवा में अपना बलिदान दे चुके थे।

लाला लाजपतराय के वचन "मेरी छाती पर पड़ी चोट अंग्रेजी साम्राज्य के कफन की कील बनेगी" नवयुवकों को प्रेरणा दे रहे थे।

1929 के लाहौर अधिवेशन में राष्ट्रीय कांग्रेस पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास कर चुकी थी। आजादी पाने के लिए योजनाओं का क्रियान्वयन आरम्भ हो चुका था। ऐसे विकट समय में युवा भगवान्सिंह ने भारतमाता को स्वतन्त्र कराने का संकल्प लिया। ऐसे समय में इनके जीवन में अनेक घटनाएं अनायास घट रही थी। आप अपने साथियों के साथ आर्यसमाज व कांग्रेस का कार्य अति उत्साह से कर रहे थे। आपने नमक सत्याग्रह में नरेला क्षेत्र का नेतृत्व किया। इस आंदोलन में नरेला क्षेत्र के अनेक क्रांतिकारी सत्याग्रही गिरफ्तार कर लिए गए। उनको जेल में यातनाएं दी गईं, झूठ कैस बनाए गए किन्तु वे अन्यायकारी सरकार के खिलाफ डटकर खड़े रहे।

आपने अनुभव किया कि "राष्ट्रसेवा का कार्य आजीवन ब्रह्मचारी रहकर ही भली भांति किया जा सकता है।" यह अटल निश्चय करके आपने 1936 में आर्यसमाज नरेला के वार्षिक उत्सव पर हजारों लोगों की उपस्थिति में आजीवन ब्रह्मचारी रहने की भीष्मप्रतिज्ञा की और नैष्ठिक ब्रह्मचारी की दीक्षा लेकर आप भगवान्सिंह से ब्रह्मचारी भगवान्देव बन गए। इस व्रत को धारण करके आपने गृहत्याग कर दिया और अपनी पैतृक भूमि पर आर्य विद्यार्थी आश्रम की स्थापना की और निर्धन विद्यार्थियों के अध्ययन की व्यवस्था करके आयुर्वेदिक औषधालय, गोशाला और उपदेशक विद्यालय का संचालन करने लगे। कुछ समय बाद आश्रम की सभी जिम्मेवारियां अपने सहयोगियों को सौंपकर आप वेद, उपनिषद्, व्याकरण आदि के अध्ययन हेतु दयानन्द वेद विद्यालय नई दिल्ली में आचार्य राजेन्द्र शास्त्री का शिष्यत्व स्वीकार किया और पूर्ण पुरुषार्थ के साथ संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया। 1938 में चित्तौड़गढ़ जाकर आपने स्वामी व्रतानन्द जी से महाभाष्य आदि आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन किया।

1939 में निजाम हैदराबाद ने अपने राज्य में वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार पर प्रतिबन्ध लगा दिया, अनेक हिन्दू मन्दिर गिरा दिए गए और मन्दिरों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। आर्यसमाज ने हिन्दू समाज की इस पीड़ा को अपनी पीड़ा मानकर उसका निवारण करने की ठानी और आर्यसमाज के नेतृत्व में हैदराबाद सत्याग्रह आरम्भ कर दिया।

आपने क्षेत्र में घूम-घूमकर हैदराबाद सत्याग्रह के लिए लोगों को तैयार किया और दिल्ली से बहुत बड़ा जत्था लेकर आप हैदराबाद पहुंचे। आपको सत्याग्रहियों का नेता मानकर नवाब की ओर से 1 वर्ष 4 मास की सजा सुनाई गई और नलदुर्ग जेल में मिट्टी, सीमेंट आदि मिलाकर खाना दिए जाने से आपका स्वास्थ्य खराब हो गया, जिससे 35 पौंड वजन घट गया। अंत में आर्यसमाज के अनेक नेताओं के बलिदान और संघर्ष के कारण आर्यसमाज की जीत हुई और निजाम हैदराबाद को हार स्वीकार करनी पड़ी। यह आर्यसमाज का बहुत बड़ा आंदोलन था।

पंडित विशम्भर दयाल शर्मा झज्जर निवासी द्वारा 1915 में अपनी पैतृक जमीन में स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा गुरुकुल झज्जर की नींव रखी गई। तत्कालीन विशेष परिस्थितियों में यह गुरुकुल दयनीय अवस्था को प्राप्त हो गया था। स्थानीय आर्य नेता ब्रह्मचारी भगवान्देव जी के पास पहुंचे और विशेष आग्रह पर आपने 8 नवंबर 1942 दीपावली के अवसर पर यहां आकर गुरुकुल झज्जर को संभाला और आचार्य बने।

भारत के आजादी आंदोलन में आपका विशेष योगदान रहा। भारत-पाक विभाजन पर पाकिस्तान से रेलगाड़ियों में हिन्दुओं की बहन-बेटियों के क्षत-विक्षत शव आने लगे तो शीर्ष नेताओं के इशारे पर बदले की कार्रवाई की गई। क्षेत्र के लोगों ने डर के मारे गुरुकुल को छावनी के रूप में आवास बना लिया और आचार्य भगवान्देव ने उनकी रक्षा कर खाने पीने का विशेष प्रबंध किया। अपने विशेष सहयोगियों के साथ सरदार पटेल से मीटिंग करके इस आंदोलन में विशेष भूमिका निभाई।

कन्याओं की शिक्षा के लिए आपने अपनी 215 बीघा पैतृक भूमि में स्वामी आत्मानन्द सरस्वती के करकमलों से 1954 में कन्या गुरुकुल की स्थापना की। यह संस्था अब आर्ष कन्या गुरुकुल नरेला के नाम से प्रसिद्ध है। इस संस्था ने स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में चहुंमुखी उन्नति की है।

आचार्य जी का जीवन यौवनकाल से ही संघर्ष पूर्ण रहा है। आजादी प्राप्ति तथा पंजाब विभाजन के उपरान्त हिन्दीभाषा को महत्त्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए था परन्तु सिख नेता पंजाबी को राज्य की राजकीय भाषा बनाना चाहते थे। इससे पंजाब के हिंदू व हरियाणा की जनता बहुत रुष्ट थी। भाषा संबंधी विवाद उठ खड़ा हुआ। इस विवाद को सुलझाने के लिए एक फार्मूला बनाया गया जो सच्चर फार्मूला के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इससे आंदोलन को सुचारु रूप से चलाने के लिए हिंदी रक्षा समिति का गठन किया गया। आंदोलन सत्याग्रह के लिए पूरे हरियाणा की बागडोर आचार्य भगवान्देव को सौंपी गई। आपने अपने सहयोगियों को तैयार किया और 28 जुलाई 1957 को रोहतक की अनाजमण्डी में एक विशाल जनसभा का आयोजन किया गया, जिसे देखकर पंजाब सरकार के हाथ पांव फूल गए। सरकार द्वारा लाठीचार्ज किया गया और सात सत्याग्रही घायल हो गए। अनेक नेताओं को गिरफ्तार किया गया। आपके वारंट जारी कर दिए गए आप पर भी अनेक केस दर्ज किए गए और कन्या गुरुकुल नरेला तथा पैतृक भवन को जब्त करने का फरमान जारी हो गया और नोटिस मकान पर चिपका दिया गया। अनेक लोगों को कारागार में डाल दिया गया। इस आंदोलन में अपार जनसमूह ने तन-मन-धन से सहयोग किया और अन्त में विजयी हुए। आन्दोलन की समाप्ति पर साढ़े तीन लाख रुपयों में सार्वदेशिक सभा के लिए आसफ अली रोड दिल्ली में भवन खरीदा गया। वह इसी आंदोलन की देन है।

हिंदीरक्षा आंदोलन के बाद पंजाब के नेता चंडीगढ़ को पंजाब में मिलाने पर प्रयास करने लगे। प्रोफेसर शेरसिंह जी शिक्षा राज्यमंत्री भारत सरकार का संदेश पाकर आचार्य भगवान्देव दिल्ली पहुंचे और वहां पर चौधरी देवीलाल जी, चौधरी बंसीलाल जी, प्रोफेसर शेरसिंह जी, पंडित जगदेवसिंह सिद्धांती आदि अनेक नेताओं से विचार विमर्श करके चंडीगढ़ पंजाब को देने का विरोध करने का प्रस्ताव पास हुआ और इसके लिए जनसमर्थन तैयार करने का निर्णय लिया गया। आचार्य भगवान्देव ने पृथक् हरियाणा बनाने की मांग शुरू कर दी जिसका लोगों ने अपार समर्थन किया।

चौधरी देवीलाल जी ने रोहतक के रामलीला मैदान में विशाल जनसम्मेलन का आयोजन किया जिसकी अध्यक्षता आचार्य भगवान्देव ने की तथा आचार्य कृपलानी इसमें मुख्य अतिथि थे। सम्मेलन में लाखों लोगों ने पहुंचकर आचार्य जी को अपना समर्थन दिया और अलग हरियाणा बनवाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

1962 में हरियाणा और भारत सरकार ने कुंडली में एक्सेस कम्पनी द्वारा बूचड़खाना खोलने की योजना को स्वीकृति दे दी। इस क्षेत्र के लोगों ने बूचड़खाने को हटाने के लिए आचार्य भगवान्देव को सर्वसम्मति से अध्यक्ष तथा चौधरी हीरासिंह दिल्ली को मन्त्री चुना गया। स्वामी जी के नेतृत्व में सड़कों पर अपार जनप्रदर्शन किया गया। जिसको देखते हुए तत्कालीन मुख्यमंत्री चौधरी बंसीलाल ने बूचड़खाना के लाइसेंस को रद्द करना पड़ा।

1966 में पूरे देशभर में गोरक्षा आंदोलन चला, जिसमें सभी धार्मिक संगठनों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया। इसमें आचार्य भगवान्देव ने सैंकड़ों सत्याग्रहियों के जत्थे भेजकर इस आंदोलन को अपार जनसमर्थन दिया।

भारतीय संस्कृति के संरक्षण और उसके प्रचार-प्रसार में आचार्य भगवान्देव ने अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दिया। 13 फरवरी 1961 को हरियाणा प्रान्तीय पुरातत्त्व संग्रहालय की स्थापना की। इस संग्रहालय में आपने हजारों प्राचीन सिक्के, मुद्राएं, मुद्रा सांचे, मोहरें, पाषाण मूर्तियां, शिलालेख, मृण्मूर्तियां, पांडुलिपियां आदि दुर्लभ वस्तुएं संग्रहित की हैं। आपने महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा लिखित ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश एवं ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका को ताम्र-पत्रों पर उत्कीर्ण करवाकर उन्हें सदियों-सदियों तक सुरक्षित कर दिया।

प्राचीन वैदिक ग्रंथों, चिकित्सा ग्रंथों, इतिहास, आयुर्वेद, यात्रा-वृत्तान्तों, स्वास्थ्य आदि के प्रकाशनार्थ आपने हरयाणा साहित्य संस्थान की स्थापना की। आयुर्वेद औषधियां के निर्माण व जनसेवा कार्य हेतु आपने आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला नामक चिकित्सा प्रकल्प की स्थापना की। इस रसायनशाला में आसव, अरिष्ट, भस्म, चूर्ण, अवलेह व घृतादि विशिष्ट औषधियों का निर्माण किया जाता है। आपने आयुर्वेद में कैंसर जैसी बीमारियों का इलाज भी खोज निकाला था। कैंसर के रोगियों के लिए आपने आयुर्वेदिक कैंसर चिकित्सालय का निर्माण भी किया।

आचार्य भगवान्देव 1970 को दयानन्दमठ दीनानगर पंजाब में स्वामी सर्वानंद जी महाराज से संन्यास लेकर आप स्वामी ओमानन्द सरस्वती के नाम से प्रसिद्ध हो गए।

वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु स्वामी जी ने सम्पूर्ण भारत सहित सोवियत रूस, जापान, थाईलैंड, ऑस्ट्रेलिया, सिंगापुर, बाली, इंडोनेशिया, अफ्रीका, जर्मनी, इंग्लैंड, मॉरीशस, जावा, सुमात्रा चीन, ताइवान आदि देशों की यात्राएं कीं।

एक सफल साहित्यकार के रूप में आपने इतिहास, वैदिक धर्म, चिकित्सा शास्त्र, यात्रा वृतांत, वीर बलिदानों की जीवनियां, व्याकरण शास्त्र आदि अनेक ग्रंथों का सृजन व सम्पादन किया।

स्वामी ओमानन्द जी द्वारा सामाजिक सेवा साहित्य सेवा इतिहास आदि क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए 1965 को चंडीगढ़ में हरियाणा के राज्यपाल बी.एन. चक्रवर्ती द्वारा शाल ओढ़ाकर प्रशस्ति-पत्र के साथ राजकीय सम्मान दिया गया। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय की ओर से भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति ने 1969 में राष्ट्रपति भवन में राष्ट्रपंडित की उपाधि से अलंकृत किया। 1996 में दिल्ली के मुख्यमंत्री साहबसिंह वर्मा ने दिल्ली गौरव की उपाधि से सम्मानित किया।

आप सच्चे मायने में आर्य समाज के वटवृक्ष थे। आपके सानिध्य में अनेक संस्थाएं फली-फूली हैं। आप पूरे विश्व की आर्यसमाजों के संगठन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के प्रधान, हरियाणा प्रांत की आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के प्रधान, पूरे भारत के संन्यासियों के संगठन वैदिक यतिमंडल के कार्यकारी प्रधान, महर्षि दयानन्द द्वारा बनाई गई परोपकारिणी सभा अजमेर के कार्यकारी प्रधान, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक के सीनेट सदस्य, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के शिष्ट परिषद् के सदस्य, अखिल भारतीय इतिहास परिषद् भारत सरकार के परामर्शदाता तथा गुरुकुल झज्जर और कन्या गुरुकुल नरेला के कुलपति रहे।

आपने संन्यासियों, ब्रह्मचारियों, समाजसेवियों और राजनेताओं की इतनी बड़ी फौज तैयार की है, जो विश्व के हर देश के कोने-कोने में महर्षि के संदेश और आर्य विचारधारा का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। आप द्वारा की गई सामाजिक सेवा के प्रति पूरा समाज सदा ऋणी रहेगा।

-अंजयकुमार शास्त्री, आर्यसमाज भाण्डवा
(चरखी दादरी) 9812201100

मूर्ति क्यों तोड़ दी?

❑ राजेश आर्य, गांव आट्टा, जिला पानीपत मो० 9991291318

प्रिय पाठकवृन्द! मार्च 2018 में त्रिपुरा राज्य में 25 वर्ष का कम्युनिस्ट शासन समाप्त हुआ, तो वहाँ के लोगों ने वहाँ लगी लेनिन (रूसी विचारक) की प्रतिमा भी तोड़ दी। इसकी प्रतिक्रिया में पश्चिम बंगाल में श्यामाप्रसाद मुखर्जी की प्रतिमा पर हथौड़े बरसाये गए। उधर तमिलनाडु में पेरियार की मूर्ति तोड़ी गई, तो उत्तर प्रदेश में भी डॉ० भीमराव अम्बेडर की मूर्ति पर गुस्सा उतारा गया। किसी की मूर्ति लगाने से कोई महान् नहीं हो जाता और मूर्ति तोड़ने से किसी (व्यक्ति या विचार) की हत्या नहीं होती। भारत के इतिहास में मुसलमानों ने सैकड़ों वर्ष तक हिन्दू आस्था की मूर्तियां तोड़ीं, पर वे बार-बार बनती रहीं और आज तक बन रही हैं।

स्मृतिशेष डॉ० धर्मवीर जी ने लिखा है-"हमें यह समझना चाहिए कि केवल मूर्ति को तोड़कर मूर्तिपूजा को समाप्त नहीं कर सकते, मूर्तिपूजा क्रिया नहीं, मूर्ति पूजा विचार है। विचारों का स्थान विचार लेते हैं। वस्तुओं या मनुष्यों को तोड़ने या मारने से विचार नहीं मर जाता।"

लेनिन विदेशी विचारक था। इतिहास इस बात का साक्षी है कि 1917 में रूस की क्रान्ति के समय उसने हिंसा को प्राथमिकता दी और लाखों लोगों का नरसंहार करवाया। हो सकता है तात्कालीन परिस्थिति में ऐसा करना रूस के लिए लाभकारी रहा हो, पर उसकी विचारधारा सार्वकालिक व सार्वभौमिक नहीं हो सकती, जो उसके नाम पर भारत में लेनिनवाद का प्रचार किया जाये।

भारत में भी लेनिन के समर्थक विरोधी विचार रखने वालों की हत्या करने में भी संकोच नहीं करते। इसका उदाहरण केरल आदि राज्यों में देखा जा सकता है। यद्यपि लेनिनवादी मूर्तिपूजक नहीं हैं, पर प्रेरणा के लिए उन्होंने लेनिन की मूर्ति बनाई। त्रिपुरा में यह मूर्ति टूटी तो भारत के कम्युनिस्ट मातम मनाने लगे। पहली बार उनके मुख से यह सुनने को मिला कि मूर्ति तोड़ी गई, अन्यथा अभी तक तो वे यही कहते थे कि भारत में (मुस्लिमों द्वारा हिन्दुओं की) कोई मूर्ति नहीं तोड़ी गई।

और इसकी प्रतिक्रिया में पश्चिम बंगाल में भारत के महान् देशभक्त डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी की मूर्ति तोड़ी गई अर्थात् लेनिन को आदर्श मानने वालों के लिए देशभक्त की कोई कीमत नहीं है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जब किसी सम्प्रदाय के महापुरुष विदेशी हो जाते हैं और वह विदेशी भाषा में सोचने बोलने लगता है तो संसार की कोई ऐसी शक्ति नहीं जो उसे अपने देश के प्रति निष्ठावान् बनाए रख सके। कम्युनिस्टों के विषय में देश इस सच्चाई को कई बार देख चुका है। 1942 में इन लोगों ने 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का विरोध किया, क्योंकि तब अंग्रेज रूस (कम्युनिस्ट) के मित्र थे और अंग्रेजों का विरोध रूस का विरोध मान गया। 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण किया तो ये लोग भारतीय होकर भी चीन की जय बोल रहे थे, क्योंकि चीन कम्युनिस्ट है।

इन लोगों के लिए भगतसिंह इसलिए आदरणीय नहीं है कि वह देशभक्त था, अपितु इसलिए आदरणीय है कि वह लेनिन का साहित्य पढ़ता था और उससे कुछ प्रभावित भी था। लेनिन की मूर्ति लगाने में बस यही तर्क देकर हमें बहकाया जाता है कि वह भगतसिंह का भी प्रेरक था। भगतसिंह तो करतारसिंह सराभा, सरदार अजीतसिंह, सूफी अम्बाप्रसाद, गुरु रामसिंह, भाई परमानन्द आदि से भी प्रेरणा पाते थे। फिर उन्हीं में से किसी की मूर्ति लगाई जा सकती थी और नहीं तो भगतसिंह की ही लगा लेते, अन्यथा पी.सी. जोशी आदि की ही लगा लेते। समाजवाद के लिए विदेशी व्यक्ति की क्या आवश्यकता थी?

वैसे तो लेनिन या किसी की भी मूर्ति तोड़ना गलत ही है, पर लेनिन की मूर्ति तोड़ने की प्रतिक्रिया में श्यामाप्रसाद मुखर्जी की मूर्ति पर हथौड़े चलाने वाले भारतीय लेनिन भक्तों ने ऐसी प्रतिक्रिया रूस के विरुद्ध क्यों नहीं व्यक्त की, जब यूक्रेन (रूस) में ही रूस के लोगों ने लेनिन की मूर्ति तोड़ी थी और लेनिनग्राद का नाम बदलकर पुनः सेंट पीटर्सबर्ग रखा था, तो तथाकथित लेनिन-भक्त कहाँ चले गये थे? जब रूस ने ही लेनिन को नकार दिया, तो वह

भारत का क्या लगता है? सम्भव है त्रिपुरा में लेनिन की मूर्ति तोड़ने की प्रेरणा भारत के लोगों को रूस से ही मिली हो। यद्यपि मूर्ति तोड़ना गलत था, पर उसका दण्ड श्यामाप्रसाद मुखर्जी की मूर्ति को देना कहाँ तक बुद्धिमत्ता है? यदि लेनिन रूस का देशभक्त था, तो श्यामाप्रसाद मुखर्जी भारत-भक्त थे और भारत की एकता व अखण्डता के लिए संघर्ष करते हुए वे कश्मीर की जेल में शहीद हुए थे। जिस लेनिन ने भारत के लिए कुछ भी नहीं किया; जिसकी देशभक्ति को रूस ने भी नकार दिया हो, उसके लिए अपने देशभक्त का अपमान करना भारत से गद्दारी करना है। चीन ने तो कम्युनिस्ट होते हुए भी लेनिन की मूर्ति अपने देश में नहीं लगवाई।

यह तो सत्य है कि भगतसिंह और उन जैसे कई क्रान्तिकारी रूस की क्रान्ति की सफलता से प्रभावित हुए थे, पर यह भी सत्य है कि बाद में भगतसिंह के साथी बटुकेश्वरदत्त, एम.एन. राय, पृथ्वीसिंह आजाद आदि ने बाद में विदेशी समाजवादी विचारधारा को छोड़ दिया था। कामरेड शचीन्द्रनाथ सान्याल ने 'बन्दी-जीवन' में लिखा है-''साम्यवादी नेता गुरुमुखसिंह ने चाहा कि हमारे सच्चे साथी सरदार भगतसिंह को हम लोगों से तोड़कर अपनी संस्था में मिला लें। इस कारण गुरुमुखसिंह ने भगतसिंह जी को बहुतेरा समझाया कि तुम बंगालियों के फेर में मत पड़ो। ....बहुत बहकाने पर भी भगतसिंह जी ने हम लोगों का साथ नहीं छोड़ा।'' (पृ० 295)

''मन्मथनाथ जी उस समय कम्युनिज्म के सिद्धान्त से विशेष परिचित न थे। आज कामरेड मन्मथनाथ कम्युनिज्म को जिस प्रकार समझते हैं सम्भव है भविष्य में ठीक ऐसा ही न समझें।'' (पृ० 321)

यही बात भगतसिंह के विषय में भी कही जा सकती है। उस समय लेनिन का नया-नया प्रभाव था और जिज्ञासु भाव के क्रान्तिकारी भगतसिंह ने लेनिन को पढ़ा, तो परिवार से प्राप्त आस्तिकता के भाव मन्द हो गये। सम्भव है यदि जीवित रहते, तो बाद में सामने आये लेनिन के खूनी चरित्र से भी उनका मोह भंग हो जाता। क्योंकि उनके लिए देशभक्ति प्राथमिक थी, लेनिन-भक्ति नहीं। इसी भावना के कारण उन्होंने गुरु गोविन्दसिंह, राणा प्रताप, शिवाजी, गुरु रामसिंह, सूफी अम्बा प्रसाद, स्वामी रामतीर्थ, वीर सावरकर, पंडित रामप्रसाद बिस्मिल आदि को भावभीनी श्रद्धांजलि दी। विश्वप्रेम के रूप में उन्हें भीलनी के बेर खाने वाले राम की याद आती है। आज के लेनिनवादियों की तरह वे राम के अस्तित्व को नहीं नकारते और न वीर सावरकर को 'कायर' कहते थे। भगतसिंह के विचारों में देशहित प्रथम था, पर लेनिन भक्तों ने उनके मुख्य स्वरूप को पीछे धकेल कर उन्हें लेनिनवादी 'नास्तिक' प्रचारित करने में ही सारा जोर लगाया है।

डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी की मूर्ति का अपमान हुआ तो उसकी प्रतिक्रिया तमिलनाडु में दिखाई दी। वहाँ के स्थानीय लोगों द्वारा दलितोद्धार के नाम पर हिन्दुओं (मुख्यत: ब्राह्मणों) व उनके धार्मिक ग्रन्थों की कटु आलोचना करने वाले ई०वी० रामास्वामी नायकर (पेरियार) की मूर्ति तोड़ दी गई। मूर्ति तोड़ना तो गलत था, पर हिन्दू देवी-देवताओं की मूर्तियाँ तोड़ने वाले पेरियार की मूर्ति क्यों बनाई गई और उसके अनुयायियों द्वारा उसकी पूजा क्यों की गई? क्या वह कोई देवता था, जो चेन्नई के सबसे बड़े इलाके में उसकी मूर्ति खड़ी की गई और जो बाकायदा पूजी जा रही है। यूँ तो इस मूर्तिपूजक देश में जहाँ राम-कृष्ण के साथ मुस्लिम पीर मजारों की पूजा करने वाले हिन्दू-भक्त हैं, वहीं साईं, श्रीराम शर्मा (गायत्री परिवार), लेखराज (ब्रह्माकुमारी), आशाराम, गुरमीत (सिरसा), रामपालदास (कबीर) जैसे अपनी पूजा करवाने वाले स्वयं घोषित भगवान् भी हैं। पर पेरियार तो मूर्तिपूजा का घोर विरोधी था, फिर उसकी मूर्ति की पूजा कैसे हो सकती है? उसके प्रचारकों (भक्तों) ने तो उसकी प्रथम बरसी (मृत्यु दिवस के एक वर्ष बाद) पर 25 दिसम्बर 1974 को उसकी भावना के अनुरूप चेन्नई में राम, लक्ष्मण व सीता के पुतले जलाये थे। 'रावण लीला' के इस कार्यक्रम में किसी नेता (अरुईतम्बी) ने कहा-हमें न तो भगवान् में विश्वास है, न ही किसी धर्म में हम विश्वास रखते हैं। जो लोग रावण का पुतला जलाते हैं और देश की एकता के नारे लगाते हैं, उन्हें मैं मूर्ख के सिवा कुछ नहीं मानता। पेरियार ने जब गणेश की मूर्ति का खण्डन किया था, तब भी इन्हीं लोगों ने हाय तौबा मचाया था।

-क्रमशः अगले अंक में....

सामयिक ज्वलन्त समस्या

❑ डॉ० रघुवीर वेदालंकार, पूर्व प्रो० रामजस कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

कभी आर्यसमाज को हिन्दुत्व की ढाल कहा जाता था। महामना मालवीय जी ने कहा था कि सनातन धर्म तथा आर्यसमाज दोनों ही एक कैंची के दो फलकों की तरह हैं, जो अपने मध्य आने वाले को मिलकर काट देते हैं तथा कुछ न मिलने पर स्वयं रगड़कर संघर्ष करने लगते हैं। इनमें से सनातन फलक ने तो किसी को भी नहीं काटा, स्वयं कंटता-छंटता रहा। स्वामी दयानन्द से पूर्व हिन्दू स्वेच्छा से मुस्लिम मत को स्वीकार कर रहे थे। मुसलमान तो तबलीग (धर्मपरिवर्तन) करा ही रहे थे। ईसाई भी हिन्दू जनता को भेड़ों की तरह धड़ाधड़ ईसा की शरण में भेज रहे थे। यह हिन्दू समाज बिल्कुल चुप था। इसकी तुलना राष्ट्रकवि दिनकर ने एक फुस्फुसिया जीव से की थी। स्वामी दयानन्द ने उक्त दोनों ही धाराओं से टक्कर ली। परिणाम स्वरूप आर्यसमाज ने वास्तव में हिन्दुत्व की ढाल का कार्य किया। अब वह ढाल नहीं रही। कैंची के ये दोनों फलक आपस में भी लड़ते रहे, किन्तु अब तो वह लड़ाई भी बन्द हो गयी। दोनों एक ही हो गये। प्रमाण स्वरूप हम यहाँ स्वामी सत्यप्रकाश जी को उद्धृत करते हैं। श्री रज्जू भैया के एक प्रश्न के उत्तर में स्वामी जी कहते हैं कि "जो चेहरे यज्ञ और हवन के समय दिखते थे, लगभग वही सायंकाल शाखा के स्वयंसेवकों के रूप में दिखते थे।" इस पर रज्जू भैया कहते हैं कि "संघ और आर्यसमाज दोनों में कार्य करने वाले बन्धु लगभग एक ही थे।"

यही स्थिति आज भी है क्योंकि आर्यसमाज सनातनी हो गया। सनातनी वह, जो सनातन परम्परा को तो मानता हो, किन्तु सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र में सर्वथा निष्क्रिय हो। यह हिन्दू समाज ही था जो अपने भाइयों को मुस्लिम तथा ईसाई बनते हुए भी कुछ नहीं कर रहा था। इतना ही नहीं, अपितु शुद्धि का विरोध भी कर रहा था। आज तो एक बहुत बड़ी जनसंख्या बौद्ध भी बनती जा रही है। सनातनी तथा आर्यसमाजी दोनों ही चुप हैं। सर्वपूज्य आदि शंकराचार्य ने जिस बौद्धमत को धराशायी किया था, आज उसके पूजक उसे ही अपना रहे हैं। हिन्दुओं की सक्रियता मन्दिरों में जाकर मूर्तियों को भोग लगाने, शीश नवाने तथा भेंट चढ़ाने तक ही सीमित है। उसी प्रकार आर्यसमाजियों की सक्रियता वर्तमान में साप्ताहिक सत्संगों, वार्षिकोत्सवों, वेदसप्ताह तथा बड़े-बड़े सम्मेलनों तक ही सीमित है। वर्तमान ज्वलन्त समस्याओं से उसे कुछ लेना-देना नहीं। यही कारण है कि अभी भी देवबन्द से 'गाजवाँ-ए-हिन्द' के पक्ष में फतवे दिये जा रहे हैं। इसका अर्थ कि जहाँ रहते हो वहाँ पर इस्लामी राज्य स्थापित करो तथा विरोधियों को मार डालो, इत्यादि। दूरदर्शन पर यह सब कुछ दिखलाया गया। हिन्दू कन्याओं का बलपूर्वक अपहरण, धर्म-परिवर्तन तथा कत्ल हो रहा है। कैंची के ये दोनों फलक शान्त हैं। सनातनी धर्मगुरुओं में तो फिर भी चेतना ने कुछ अंगड़ाई ली है, किन्तु आर्यसमाजियों को इसकी कोई परवाह नहीं। इस हिन्दू समाज का दौर्भाग्य यही है कि अपने को हिन्दू कहने वाले ही इसके विरोधी हैं। प्रमाणस्वरूप कर्नाटक के मुख्यमन्त्री सिद्धारमैया कहते हैं कि मैं हिन्दू हूँ, किन्तु मन करेगा तो गोमांस खाऊँगा। यह कैसा हिन्दुत्व है? क्या मुसलमानों में कोई सुअर खाने की घोषणा कर सकता है?

हिन्दू समाज तो पहले ही पाखण्ड में धंसा हुआ था। अब वह पाखण्ड द्रुतगति से फैल रहा है। दूरदर्शन भी इसमें माध्यम है। झाड़-फूंक, बलि, गण्डे-ताबीज, ऊपरी हवा भगाना, मजारों पर मत्था टेकना, चादरें चढ़ाना, वहां मिनौती मांगना, यह सब हिन्दू समाज ही कर रहा है। राजनेता भी इसे कर रहे हैं। सनातनियों की भांति आर्यसमाज ने भी इन पाखण्डों से अपने आखें फेर ली हैं, क्योंकि दोनों एक हो गये हैं। इतना ही नहीं, वैज्ञानिक भी इनके चक्कर में हैं, तभी तो साइंस के प्रोफेसर डॉ० मुरली मनोहर जोशी ने भैंसे की बलि दिलवायी थी। इसी परम्परा के अनुयायी यदि सन्तानप्राप्ति के लिए या किसी तान्त्रिक के बहकावे से किसी के पुत्र की बलि दे देते हैं तो आश्चर्य क्या है? आर्यसमाज नहीं सोच रहा कि अन्धविश्वास तथा पाखण्ड कितना बढ़ रहा है? बस, यज्ञ तथा साप्ताहिक सत्संग करते रहिए, दयानन्द की जय बोलते रहिए।

आर्यसमाजियो! दयानन्द एक प्रकाशस्तम्भ हैं, जो युग-युग तक संसार को प्रकाश देता रहेगा। दयानन्द की जय तो भारत ने ही नहीं, विश्व ने बोली, विधर्मियों ने बोली। हां, अब वह मन्द तथा सीमित होती जा रही है। विश्व तो क्या

भारत में भी वह सिमटती जा रही है। क्यों? इसके पीछे कारण तो और भी हैं, किन्तु स्वयं आर्यसमाजी ही इसके कारण हैं, क्योंकि हम उसकी जय तो बोलते रहे, किन्तु उस निर्भीक वेदवेत्ता योगी के जीवन तथा कार्यों को अपने जीवन में नहीं उतारा। ठीक इसी प्रकार-

जिस प्रकार सनातनी बन्धु भगवान् राम के तो उपासक हैं, किन्तु किस राम के? रामलला के? जो बेचारा कुछ भी नहीं कर सकता। ये लोग उस मर्यादा पुरुषोत्तम राम के उपासक नहीं हैं जिसने प्रतिज्ञा की थी, 'निशिचरहीन करों मही, भुज उठाय प्रण कीन्ह'। ये बन्धु भगवान् कृष्ण के भी माखनचोर तथा रासलीला संलग्न स्वरूप के उपासक हैं, उस सुदर्शन चक्रधारी कृष्ण के नहीं, जो सज्जनों की रक्षा, दुष्टदलन तथा धर्म की स्थापना को ही अपना उद्देश्य बतलाता है। राम के समय तो निशिचर रात्रि में ही दुष्कर्म करते थे, आज वे दिनचर बनकर दिन में ही खुलेआम वह सब कुछ पाप कर रहे हैं जो उस समय निशाचरों ने भी नहीं किया। इस पर न तो सनातन धर्म में कोई हलचल है तथा न ही आर्यसमाज में। उन्हें मूर्तिपूजा तथा भागवतकथा से फुर्सत नहीं तथा इन्हें यज्ञों तथा साप्ताहिक सत्संगों से। दोनों एक हो गये।

ऐसी बात नहीं है कि पूरे कुएं में भी भांग पड़ गयी है। अभी भी स्फुट रूप में आर्यसमाज में चेतना है। इसी के परिणाम स्वरूप सुदृढ़ दुर्ग में रहने वाले तथाकथित संत रामपाल को जेल की हवा खानी पड़ी तथा आचार्य भगवान्देव एवं आर्यों के प्रयास से ही कुण्डली ग्राम में बूचड़खाना बनाना-रोकना पड़ा। आचार्य जी जैसे तप:पूत कर्मठ कार्यकर्त्ता अब कहाँ हैं? अब तो समाजसेवा भी पद-प्रतिष्ठा के लिए की जाती है। हिन्दू जनता की अन्धश्रद्धा ही देखिये कि वही रामपाल अब पुन: जगद्गुरु के रूप में अवतरित होकर भक्तों का पूज्य बन रहा है।

और देखिए मुसलमानों के मंदरसों में बच्चों को इस्लाम की शिक्षा देकर मिशनरी बनाया जाता है, जबकि सनातन धर्म तथा आर्यसमाज के किसी भी शिक्षणालय या अन्य संस्था द्वारा यह कार्य नहीं किया जाता। बाहुबलियों तथा धर्मान्धों पर उत्तर प्रदेश में योगी जी का हण्टर चल रहा है, किन्तु जनता तो खामोश है। क्या उसे कोई भावी खतरा नजर नहीं आता? किसी भी देश को पराधीन बनाने के चार उपाय हैं-आक्रमण, अतिक्रमण, धर्मान्तरण, जनसंख्या वृद्धि। आक्रमण का युग तो समाप्त हो गया, किन्तु शेष तीनों के द्वारा भारत को इस्लामी राष्ट्र बनाने का यत्न किया जा रहा है। इसकी परवाह न तो इस सनातनी जनता को है तथा न ही आर्यसमाज को, क्योंकि दोनों एक हो गये हैं। भाई-भाई हैं। उत्तर प्रदेश में 1700 मदरसे अवैध पाये गये। उत्तराञ्चल में तीन हजार अवैध मजारों को हटाया गया। यह सब क्या है? यह एक व्यापक एक सुगठित प्रयास है भारत को इस्लामी राष्ट्र बनाने का। विदेशी सहायता भी इसे प्राप्त है। केवल मन्दिरों में जाकर मत्था टेकने तथा आर्यसमाज में यज्ञ-सत्संग मात्र करने से यह नहीं रुकेगा। जनता को ही सनातनी तथा आर्यसमाजी दोनों मिलकर इसके प्रतिकार का कोई ठोस उपाय सोचे तथा करे।

सम्पर्क-बी-266 सरस्वती विहार, दिल्ली-34 मो० 9868144317

समाज में नशे का बढ़ रहा है प्रकोप, भजनों के माध्यम से दिया बच्चों को सन्देश

आर्यसमाज मन्दिर सिरसा में मासिक सत्संग का आयोजन किया गया जिसमें अनेक धर्मप्रेमी सज्जनों ने भाग लिया। मासिक सत्संग के दौरान करवाये गये यज्ञ में मुख्य यजमान के तौर पर ओमप्रकाश खर्रा ने आहुति दी। यज्ञ के ब्रह्मा रवीन्द्र प्रताप शास्त्री रहे। इस मौके पर भजनोपदेशक सत्यपाल मधुर ने अपने भजनों के माध्यम से देश में चल रहे कुरीतियों को दूर करने के लिए रामचरितमानस द्वारा लोगों को समझाया। इस मौके पर दिल्ली से पधारीं भजनोपदेशिका स्नेहा आर्या ने कहा कि आज देश के हालात विकट होते जा रहे हैं। समाज में नशे का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। अपने भजनों के द्वारा बच्चों को समझाने का कार्य किया। इस मौके पर छोटी आयु में ही देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत गीत सुनाने पर आर्यसमाज के संरक्षक जगदीश सींवर शेखूपुरिया ने यशस्वी आर्य को सम्मानित किया। इसके साथ-साथ मुख्य यजमान ओमप्रकाश खर्रा को भी सम्मानित किया गया। इस मौके पर ऋषिकिशोर खर्रा, शुभम एडवोकेट खर्रा, दिवाकर खर्रा, शिवम खर्रा, राजेन्द्र आर्य, शमशेर आर्य, इंद्रपाल आर्य , रामप्रताप सरपंच, वेदप्रकाश सरदाना, चन्द्रभान आर्य, मा० जयप्रकाश आदि मौजूद थे।

19वीं सदी में नवजागरण के प्रणेता थे महर्षि दयानन्द

आधुनिक भारत में राष्ट्रवादी चेतना को जागृत करने वाले युगपुरुष महामानव महर्षि दयानन्द जी का आविर्भाव आज से ठीक दो सौ वर्ष पूर्व 1824 ईस्वी में एक ऐसे कालखंड में हुआ था, जब देश पराधीनता की बेड़ी में जकड़े होने के कारण निराशा और हताशा की दहलीज पर खड़ा था। अपने अवतरण के कुछ वर्षों के उपरान्त ही महर्षि ने जनमानस में आत्मशोध, आत्मगौरव, स्वाभिमान एवं स्वाधीनता का मंत्र फूँककर दासता की बेड़ी को काटने का श्रीगणेश किया। यदि उन्हें हम 19वीं सदी के नवजागरण का सूर्य कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। शैशव काल में ही अपने धर्मनिष्ठ माता-पिता के सान्निध्य में इन्होंने यजुर्वेद संहिता को आत्मसात् किया। कालान्तर में कई पारिवारिक घटनाओं ने उनके मन-मस्तिष्क को झकझोर दिया। परिणामस्वरूप वैभव सम्पन्न परिवार का परित्याग कर वे सत्य की खोज में निकल पड़े। जीवनपर्यन्त अभावग्रस्त लोगों का उद्धार करने के लिए उन्होंने अपने आपको आहूत कर दिया। वास्तव में उनके आविर्भाव के समय देश सामाजिक और आर्थिक दृष्टिकोण से भी निष्प्राण हो गया था, परन्तु महर्षि ने देश के आत्मगौरव के सम्मान के लिए जो बिगुल फूँका वह लोक निर्माण के लिए काफी था। वास्तव में इन्होंने मोक्ष के आनंद को प्राथमिकता न देकर जनमानस को प्रेरित करते हुए अंधविश्वासों पर कुठाराघात किया। अन्याय, अज्ञान और अभावग्रस्त लोगों को उद्धार करने हेतु वे जीवन-पर्यन्त यायावर की भाँति देश का भ्रमण करते रहे। युगप्रवर्तक दयानन्द ने 1875 में आर्यसमाज की स्थापना कर वेदों को समस्त ज्ञान व धर्म के आदि मूल स्रोत को प्रामाणिक ग्रंथों के रूप में प्रतिस्थापित किया। संपूर्ण भारतीय जनमानस को वेदों की ओर लौटने का उद्घोष कर अपनी विलक्षणता को दर्शाया। वास्तव में इस महामानव ने वेदों के अध्ययन के द्वार खोल भारतीय संस्कृति के पुनरुत्थान का मार्ग प्रशस्त किया। वे ऐसे धर्माचार्य थे, जिन्होंने धार्मिक विषयों को केवल आस्था व श्रद्धा के आधार पर मानने से इनकार कर दिया और उसे बुद्धि विवेक एवं विज्ञान की कसौटी पर कसने के उपरान्त ही मानने का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। वे स्वराज के ऐसे सर्वप्रथम उद्घोषक एवं संदेशवाहक थे जिन्होंने अंग्रजी दासता में आकंठ डूबे देश में राष्ट्रगौरव व स्वाभिमान का बिगुल बजाया। संस्कृत में प्रकाण्ड विद्वान् होने के बावजूद संपूर्ण देश को एकता के सूत्र में बांधने के लिए हिन्दी भाषा का चयन किया। वेद के उपदेशों के माध्यम से भारतीय समाज को एक नया आयाम दिया। सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध जीवन-पर्यन्त संघर्ष कर वेदों के स्वर्णिम चिंतन को इन्होंने अपने ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदभाष्यभूमिका को संस्कारविधि में प्रस्तुत कर भारतवर्ष के अतीत की गरिमा का पक्ष अत्यन्त प्रबलता से प्रस्तुत किया, जिसमें स्वाभिमान एवं राष्ट्रीयता का समावेश हो। उनकी प्रवृत्ति सत्यान्वेषण जैसी थी और दृष्टिकोण वैज्ञानिकता-सी। आज देश ऐसे महामानव की दो सौवीं जयन्ती मानकर उन्हें स्मरण कर रहा है। उनकी ऐसी कृतियों का स्मरण कर रहा है, जिसके लिए उन्होंने संपूर्ण जीवन को वैदिक संस्कृति के हवन कुण्ड में होम कर दिया था। ऐसे महामानव को हमारा शत-शत नमन।

धन्य है तुझको ऐ ऋषि, तूने हमें बचा दिया।
सो-सो के लूट रहे थे हम, तूने हमें जगा दिया॥

-संजय कुमार मिश्रा, प्राचार्य-सह-सहायक क्षेत्रीय अधिकारी, झारखण्ड प्रक्षेत्र-J, C/o डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, हेहल, राँची, झारखण्ड

सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक से सम्बन्धित समस्त आर्यसमाजों एवं संस्थाओं के अधिकारियों को अवगत कराया जाता है कि जो भी आर्यसमाज एवं संस्था सभा के PAN नम्बर तथा 80G का प्रयोग कर रही हैं, वह सभा कार्यालय को सूचित करें। ऐसा न करने की अवस्था में वह आर्यसमाज तथा संस्था हानि के लिए स्वयं जिम्मेवार होंगी। - उमेद शर्मा, सभामन्त्री

ओम् और वैदिक ज्ञान

❑ डॉ० वासुदेव प्रसाद, म०नं० 870, सैक्टर-16, पंचकूला

13.7 बिलियन वर्ष पहले बिगबैंग थियोरी के पश्चात् इस सृष्टि की शुरुआत के पहले भी ओम् ब्रह्म का अस्तित्व था। नासा एवं अन्य एक्सो-प्लानेट के बारे में किए गए अनुसंधान कार्यों से यह बात जगजाहिर होता है। ब्रह्माण्ड में संवेदकों से प्राप्त इलेक्ट्रोमैगनेटिक तरंगों से प्राप्त संवेदनाओं का पृथ्वी पर एनलॉग टू डिजीटल कन्वर्टर से परीक्षण पर उस ओम् की ध्वनि निकली। ओम् के अस्तित्व की व्याख्या विश्व के समस्त भाषाओं में मिला है। ओम् ही वह सात्त्विक नियन्ता और असीम शक्ति स्त्रोत है, जो जीव और प्रकृति को अपनी उद्यमशीलता-बुद्धिमत्ता से नियंत्रित करता है। क्षिति-जल-पावक-गगन-समीर समान पांच उंगलियों वाली ऊर्जा सम्मत को अपने हाथ की मुट्ठी में बांधकर सब कुछ नियंत्रित कर रहा है अर्थात् स्वयं में गतिशील और स्थैतिक ऊर्जा बन जीव और प्रकृति को साध रहा है और इस सृष्टि के अंत में विज्ञान के इस बिगक्रंच थियोरी के अनुसार निर्लिप्त कर लेगा। सब कुछ एक ब्लैक होल की प्रक्रिया से गुजरेगा, वह ब्लैक होल अजर-अमर-अभय-अनन्त ऊर्जा स्त्रोत स्वयं ओम् होगा।

सृष्टि के आरम्भ में चारों वेद का ज्ञान उस ईश्वर ओम् ने समाधि अवस्था में 4 ऋषियों को प्रदान किया, वे 4 आदि ऋषि अग्नि ऋषि, वायु ऋषि, आदित्य और अंगिरा ऋषि थे। अग्नि ऋषि को ऋग्वेद का ज्ञान मिला। इस वेद में 10,582 मंत्र हैं। इन मंत्रों में ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना की ज्ञानमयी व्याख्या है। वायु ऋषि को ब्रह्म ने यजुर्वेद का ज्ञान दिया। इसके 1975 मंत्रों में कर्म उपासना की व्याख्या है। कर्म की प्रतिष्ठा, सत्कार्यों के प्रति आस्था-विश्वास, यज्ञ-हवन की कार्य विधि, आर्य सनातनपूजा-पद्धति, तर्पण के कार्यान्वयन की संपूर्ण जानकारी मंत्रोच्चारण के द्वारा संपन्न कराने के बारे में विस्तार से वर्णन है। तीसरा वेद सामवेद का ज्ञान ईश्वर ने आदित्य ऋषि के कंठ से दिया। इसमें उपासना तथा सांध्योपाय शांति-स्वस्ति वाचन के 1875 मंत्र हैं। हमारा चौथा वेद अथर्ववेद है। इसको ईश्वर ने अंगिरा ऋषि को समाधिवस्था में प्रदान किया, इसमें शस्त्र-शास्त्र, आयुध विज्ञान, परमाण्विक शक्ति, शरीर विज्ञान-आयुर्वेद शास्त्र के बारे में 5977 वेदमंत्रों में व्याख्या है। पहले ताल और भोज-पत्रों पर वेदों को लिखा गया था। इन वेदों से ही पाणिनि व्याकरण का जन्म हुआ, जिसे स्वामी विरजानन्द ने अपने शिष्य दयानन्द को सिखाया।

स्वामी दयानन्द ने वेदों का सांगोपांग अध्ययन कर पाणिनि व्याकरण के द्वारा छंद-श्लोकों, मूल शब्दों का संधि-विच्छेद और समास-विग्रह से सही वेदभाष्य किया। असली ज्ञान तार्किक होता है.वेदों में कोई चमत्कारिक घटना नही है.वेद मानवमात्र के कल्याण का साधन बताते हैं, इसलिए वेद का ज्ञान श्रेष्ठ है जो हम सब को आर्यश्रेष्ठ बनाता है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परमधर्म-सत्कर्म है। ओम् ही उपासना के योग्य है, जो ऊर्जा का असीम स्त्रोत है, सत्यं-शिवं-सुंदरम् और ब्रह्माण्ड का ब्रह्मा-विष्णु-शिव शक्ति त्रिनेत्र है।

होली मन बुद्धि और पर्यावरण शोधन का त्यौहार है, हुड़दंग का नहीं

'पर्व पवित्रता अभियान' चला रहे वैदिक विश्व सभा के संरक्षक श्री महावीर 'धीर' शास्त्री ने पं० नेकीराम महाविद्यालय में छात्रों को संबोधित करते हुए बताया कि होली पर्यावरण और मन-बुद्धि को शुद्ध करने की वैज्ञानिक प्रक्रिया है। होली में प्रकृति पोषक और रोगाणुनाशक पीपल, आम, जांटी, बड़, गूलर, नीम, ढाक, पलाश, सफेदा आदि के तने, फल, फूल-पत्ते तथा उत्तम सामग्री में गूगल, गिलोय, गोकंडे, सोमलता, अपामार्ग, कपूर, तुलसी, मरुआ, पीली सरसों व उसकी खल आदि में गोघृत मिलाकर पूरे देश में आहुति दी जाए तो पर्यावरण स्वच्छ होकर स्वास्थ्यप्रद वायु बहेगी। असामयिक वर्षा और ओलों की संभावना भी कम हो जाती है। होली के दूसरे भाग दुल्हैंड़ी में दो-दो व्यक्ति या दो-दो दलों की प्रतियोगिताओं द्वारा वसन्तकाल में नई कोशिकाओं के निर्माण से उत्पन्न उमंग का शारीरिक खेलों में सदुपयोग किया जाता है, जिससे उमंग गलत रूप धारण न कर सके। होली के तीसरे भाग नवरात्रों में हल्का खाना खाकर मन बुद्धि को विशेष जप, तप, उपदेश श्रवण और भक्ति से शुद्ध किया जाता है। होली पर पटाखे, पानी, पिचकारी, गुब्बारे और घातक रंगों के प्रयोग की गलत परम्परा पड़ गई है। हमें इसे छोड़ना होगा। छात्रों ने होली पवित्रता से मनाने का संकल्प लिया। प्रोफेसर डॉ० रेणू राणा ने श्री शास्त्री का परिचय देते हुए उनका स्वागत किया। प्राध्यापक श्री अमितदेव ने श्री शास्त्री का आभार जताते हुए कहा कि आज हमें विकृत हो रहे अपने त्यौहारों को बचाने की आवश्यकता है।

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा द्वारा संचालित आर्यसमाज सालवन जिला करनाल में आयोजित कार्यक्रम में आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के प्रधान सेठ राधाकृष्ण आर्य जी ने शिरकत की एवं आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के अन्तरंग सदस्य श्री वीरेन्द्र आर्य आदि गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे।

श्री .....

पता .....

.....

प्रेषक :
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
दयानन्द मठ, रोहतक
हरियाणा, 124001

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि.) के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक उमेद शर्मा ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स के लिए आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ रोहतक-124001 से प्रकाशित।

- सम्पादक उमेद शर्मा